Registration No. UPBIL/1996/7631

UTTAR PRADESH GEOGRAPHICAL JOURNAL

Volume 7

2002

(Dr.) I. S. Chandraker
Asstt. Professor (Geog.)
Govt. D. College
(M.P.)

Editor

Dr. J.P. Gupta
Reader

Department of Geography, P.P.N. College
C.S.J.M. University, Kanpur (India)

THE BRAHMAVARTA GEOGRAPHICAL SOCIETY OF INDIA

124 C-1, Indira Nagar, Kanpur - 208 026 (India)

CONTENTS

		PAGES
1.	रायपुर नगर के उपांत में आप्रवास (In-Migration in the Fringe of Raipur City) – महावीर प्रसाद गुप्त एवं सरला शर्मा	1 - 12
2.	बिलासपुर जिले की कोटा तहसील में कृषि का स्थानिक वितरण एवं प्रतिरूप – कावेरी दाभड़कर, शैलेष कुमार चौबे एवं मेधा दाभड़कर	13 - 17
3.	छत्तीसगढ़ में जनसंख्या वृद्धि – विजय कुमार तिवारी	18 - 24
4.	भारत के सन्दर्भ में क्षेत्रीय विकास नियोजन – महावीर प्रसाद गुप्त, इंद्रमनसिंह एवं अभय मिश्र	25 - 29
5.	आवर्ती विपणन केन्द्रों का स्थानिक कालिक विश्लेषण रीवा जिले का प्रतीक अध्ययन – बृजेन्द्र कुमार शर्मा	30 - 32
6.	चित्रकूट पठारी परिवेश में सूक्ष्म उच्चावच का आकारमितिक विश्लेषण – गोविन्द प्रसाद गुप्त एवं पंकज कुमार सिंह	33 - 36
7.	Water Quality Assessment of the River Gomti, U.P. – Shardendu Kislaya	37 - 41
8.	Spatial Disparity in Sex Ratio of Madhya Pradesh – Bijendra Singh	42 - 47
9.	Universalisation and Globalisation of Education (Contextual Paradigm shift in Policy Making in India) – N. R. Kaswan	48 - 55
10.	Problems and Prospects of Ground Water Fluctuations in Haryana – Sudhir Kumar Bansal	56 - 63

EDITORIAL BOARD

Editor : Dr. J. P. GUPTA

Members : Dr. (Mrs.) M. Gupta, Deptt. of Sanskrit, K.V.M. College, Kanpur, Dr. N. K. Gupta, Deptt. of Geog. D.A.V. College, Kanpur, Dr. B.D. Shukla, Deptt. of Geog. C.S.N. College, Hardoi, Dr. Sudhanshu Mishra, Deptt. of Geog. S.D. Mahila Mahavidyalya, Kaimganj, Farrukhabad.

Advisors :
1. Dr. Chandra Bhan, Reader and Head (Retd.), Department of Geography, R. B. S. College, Agra.
2. Dr. C. P. Tiwari, Prof and Head, Govt. T. R. S. Autonomous College, Rewa (M. P).
3. Dr. R. S. Tripathi, Reader, Department of Geography, Atarra (P.G.) College, Atarra, Banda.
4. Dr. I. D. Singh, Reader and Head, Department of Geography, Harish Chandra (P.G.) College, Varanasi.
5. Dr. Govind Prasad Gupta, Reader, Department of Geography, Rana Pratap P.G. College, Sultanpur.

The statement and opinions expressed in various articles are those of the authors and do not necessarily reflect the view of the Society or Editorial Board.

Any part of the Article published in the journal can not be reproduced without prior permission of the Secretary of the Society.

Copy Right - The Brahmavarta Geographical society of India, Kanpur.

Uttar Pradesh Geographical Journal
Vol. 7, 2002

भारत के सन्दर्भ में क्षेत्रीय विकास नियोजन

महावीर प्रसाद गुप्त, इंद्रमनसिंह चंद्राकर एवं अभय मिश्र

बीसवीं सदी में प्रादेशिक समन्वयन की संकल्पना के स्थापित होने के साथ ही भूगोल में प्रादेशिक विभिन्नता से संबंधित क्षेत्रीय आयाम वाली समस्याओं के निराकरण की प्रवृत्ति बढ़ी है।[1] मनुष्य ने सदैव अपनी धारणाओं और समस्याओं को क्रमबद्ध, सरलीकृत और साकार बनाने का प्रयास किया है।[2] उसने अपने वातावरण को निश्चित आकार देने के लिए अपने क्रिया-कलापों का विस्तार करके तदनुसार वातावरण को संशोधित करने का प्रयत्न किया है। दूसरी ओर वातावरण के सीमितकारी कारकों ने उसके सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थानों को बचाने का प्रयास किया। इस प्रकार भौतिक वातावरण के मध्य सामाजिक और आर्थिक संस्थानों एवं मनुष्य के विस्तार की इच्छा की अंतःक्रिया का परिणाम आज हमारे सामने हैं।[3] आज प्रत्येक विकासशील राष्ट्र अपने संसाधनों का कम से कम समय में अधिकतम विकास करने की इच्छा से व्यग्र है। इन संसाधनों के त्वरित विकास की दशाओं को निर्मित करने में सरकार एक उत्प्रेरक की भूमिका निभाना चाहती है।[4] अतः विद्यमान शताब्दी में सभी देश, चाहे वे विकसित हो या अविकसित, पूंजीवादी हों या समाजवादी, न्यूनाधिक प्रादेशिक नियोजन अपनाने को वाध्य हैं।[5]

भूगोल में प्रादेशिक अध्ययन एक महत्वपूर्ण उपागम है। ई०पू० 5वीं शताब्दी में हेरोडोट्स ने अपने समय के ज्ञात संसार को प्रदेशों में विभाजित किया था,[6] परन्तु इस दिशा में रिटर (1807-1853), ब्लाश (1903), हरबर्टसन (1905), आदि विद्वानों ने महत्वपूर्ण पहल की। इन सभी के अध्ययन का उद्देश्य विस्तृत भू-भाग को प्रदेशों में विभाजित करके उनके भौगोलिक लक्षणों का अध्ययन करना था, जिसमें संसाधनों के क्षेत्रीय वितरण के स्वरूपों का ही अध्ययन करके उसकी इतिश्री कर दी गई। किसी प्रदेश के सर्वांगीण विकास के लिए इन संसाधनों का किस प्रकार उपयोग किया जा सकता है, इस दिशा में कोई प्रयत्न नहीं किया गया।

यूरोप के राष्ट्रों में, विशेषकर रूसी क्रांति (1917), प्रथम और द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् पुनर्निर्माण का कठिन कार्य सामने था, जिससे वहाँ की अस्त-व्यस्त अर्थ-व्यवस्था सुधर सके। रूस ने "गोएलरो प्लान" एवं "गोस प्लान" के माध्यम से राष्ट्र का नियोजित विकास करने का प्रयत्न किया।[7]

प्रसिद्ध अर्थशास्त्री पैराक्स[8] ने उस दिशा में "विकास ध्रुवों" को पहचान कर नियोजित विकास करने की दिशा में सोचने का मार्ग प्रशस्त किया, जिसे बोदविल[9] ने भौगोलिक क्षेत्र से जोड़कर एक दृढ़ आधार प्रदान किया। किसी प्रदेश के उपलब्ध संसाधनों का उपयोग उस देश के सर्वांगीण विकास के लिए किस प्रकार किया जाय, यही प्रादेशिक नियोजन का लक्ष्य है। वास्तव में किसी प्रदेश के आर्थिक और सामाजिक विकास के माध्यम से वहाँ की जनता के रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाकर प्रादेशिक नियोजन के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।[10] जहाँ विकास-स्तर में सर्वाधिक क्षेत्रीय और स्थानीय अन्तर मिलता हो, वहाँ सफल नियोजन के लिए अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री, राजनीतिक, भूगर्भवेत्ता, वास्तुकलाविद, स्वास्थ्य अधिकारी, लोक प्रशासक, वित्तीय सलाहकार,

1. डॉ० महावीर प्रसाद गुप्त, रीडर, भूगोल अध्ययनशाला पं० रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)।
2. डॉ० इन्द्रमनसिंह चन्द्राकर, स०प्रा०, भूगोल विभाग, शासकीय दिग्विजय महाविद्यालय, राजनांदगाँव (छ.ग.)।
3. श्री अभय मिश्र, शोध छात्र भूगोल विभाग, शास०कला विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय, दुर्ग (छ०ग०)

इत्यादि विद्वानों का योगदान अपरिहार्य हो जाता है। परन्तु इन सभी विद्वानों का लक्ष्य आर्थिक विकास तक सीमित होता है। वहीं भूगोलवेत्ता विकास के स्पष्ट स्वरूप के क्षेत्रीय वितरण को समझने और उसकी व्याख्या करने में इन सबके मध्य एक उपयुक्त समन्वयक की भूमिका निभाता है। "प्रादेशिक नियोजन की स्पष्ट प्रस्तुति ही भूगोलवेत्ता का महत्वपूर्ण योगदान है।"[11]

नव "रोम का निर्माण एक दिन में नहीं हुआ", तब भारत जैसे विशाल और विभिन्नता वाले देश का विकास सुनिश्चित नियोजन के बिना कैसे सम्भव है ? स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय अर्थ-व्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाना आवश्यक था। रूस की विकास-योजनाओं के परिणामों से प्रोत्साहित होकर भारत में विकास के लिए सन् 1950 के बाद से पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से प्रयास प्रारम्भ हुए भारत में नियोजन की प्रकृति अब तक प्रखंडात्मक रही है। राष्ट्रीय या राज्य-स्तरीय, यहाँ तक कि जनपद एवं विकास-खण्ड के स्तर पर भी बजट का निर्धारण प्रखंडात्मक रहा है।[12] किसी प्रदेश की विशेष क्षमता का विकास उसी के अनुरूप होना चाहिए, जिससे प्रादेशिक असंतुलन को दूर किया जा सके।[13] यद्यपि संसाधन-निर्धारण के लिए प्रखण्डात्मक स्वरूप का कोई विरोध नहीं कर सकता, परन्तु सभी क्षेत्रों को समान महत्व देने से विषमताएँ बनी रहती हैं। सम्पन्न प्रदेश और अविकसित प्रदेश का अंतर बढ़ता जा रहा है।[14] निर्धन क्षेत्रों में सम्पन्न क्षेत्रों की तुलना में प्रादेशिक अंतर बहुत अधिक है।[15] योजनाकारों को अविकसित या पिछड़े क्षेत्रों की इस प्रकार की विसंगतियों को दूर करने का प्रयास करना चाहिए।[16] वास्तव में पिछड़े क्षेत्र के विकास के लिए एक अलग कार्यक्रम की आवश्यकता है, जिससे प्रखडात्मक विनियोग में पिछड़े क्षेत्र का विकास समान गति से हो सके।

क्षेत्रीय संसाधनों पर आधारित आँकड़ों की कमी होने के कारण पंचवर्षीय योजनाओं में अधिक कुछ भी नहीं किया जा सका, जबकि "अच्छी सूचनाओं पर ही नियोजन आधारित होता है।"[17] इसके अतिरिक्त ऐसे नियोजन की तैयारी में सरल और वैज्ञानिक सर्वमान्य तकनीक की आवश्यकता होती है, जिसे अब तक विकसित नहीं किया जा सका है।

किसी प्रदेश या राष्ट्र की विविध संशलिष्ट समस्याओं का समाधान ही प्रादेशिक नियोजन का उद्देश्य हैं।[18] प्रदेश के संसाधनों का सर्वेक्षण उस प्रदेश के विकास के लिए आवश्यक है। उस प्रदेश की आर्थिक क्षमताओं का ज्ञान विकास में महत्वपूर्ण योगदान करता है।[19] संतुलित विकास के लिए पूरे प्रदेश को बिखरे हुए प्रदेशों के विकसित करने के पहले अन्योन्यश्रित प्रदेशों में विकसित करना आवश्यक है।[20] परन्तु भौगोलिक दृष्टि से संतुलित या असंतुलित विकास का विस्तार नापना कठिन है, जो नियोजन के लिए एक महत्वपूर्ण प्रश्न है।[21] इस हेतु सदास्युक[22] ने सम्पूर्ण प्रदेश को "आर्थिक प्रदेशों" में बांटने का सुझाव दिया, जिससे विकास के साथ स्थानिक प्रतिरूप के परिवर्तित प्रभाव को स्पष्ट देखा जा सके।[23]

भारत की 76.27 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करती है, अतः प्रादेशिक नियोजन यहाँ के ग्रामीण विकास के लिए होना चाहिए। इस हेतु एर्काकृत योजना उपयुक्त है। भारत के सीमित संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग करके प्रतिव्यक्ति अधिकतम लाभ प्राप्त किया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों के "विकास विन्दुओं" को पहचानना होगा, जिससे विकास-चक्र क्षेत्रों में ही प्रारम्भ हो। भारत में रोजगार-प्राप्ति के लिए ग्रामीण जनसंख्या नगरों की ओर अग्रसर होती है, जिससे नगरो की समस्याएँ बढ़ जाती है। अतः विकेंद्रीकृत नगरीयकरण की नियोजित योजनाएँ ग्रामीण जनसंख्या को रोजगार प्रदान करके इस ज्वलंत समस्या को सुलझा सकती है। विकेन्द्रीकृत क्षेत्रीय आधार पर नियोजन और विकास भारत- जैसे देश के लिए स्वतः सिद्ध है या इससे बचा नहीं जा सकता।[24] ग्रामीण क्षेत्रों में उपयुक्त विशेषीकृत सेवाएँ प्रदान करके ग्रामीण और नगरीय असंतुलन को दूर किया जा सकता है।

विकसित देशों के इतिहास से विदित होता है कि आर्थिक विकास और गरीबों का विकास साथ-साथ सम्भव नहीं है। इसी प्रकार राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि और रोजगार की मात्रा में विपरीत संबंध मिलता है। भारत में कुल राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि होने के बावजूद बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि होती जा रही है। सिद्धान्ततः आर्थिक विकास और रोजगार के मध्य संतुलन आदर्श समाधान है, परन्तु व्यवहारिक रूप से इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सभी प्रखण्डों में सूक्ष्म नियोजन की आवश्यकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर सुलभ करने का महत्वपूर्ण साधन ग्रामीण क्षेत्रों में नयी आर्थिक क्रियाओं का विकेंद्रीकरण है। इसके लिए मूलभूत अवस्थापन की आवश्यकता होगी। विभिन्न सुविधाओं की स्थापना सर्वोत्तम स्थल पर करनी होगी।[25]

क्षेत्र का एकीकृत विकास

यदि गाँव का विकास करना है, तब योजनाओं को ऊपर

के स्तर से प्रारंभ करने के बजाय निम्न स्तर से प्रारंभ करना होगा। अब तक के नियोजन में जीवन को प्रभावित करने वाली आर्थिक एवं सामाजिक क्रियाओं का कार्यात्मक समन्वयन किया जाता रहा है, चाहे वह विकास खण्ड-स्तर पर ही क्यों न लागू किया गया हो, और यह समझा गया कि अंतर्क्रिया के फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रो का एकीकृत विकास होगा, परन्तु यह असफल रहा। इसके कारण अनेक है। इनमें सबसे महत्वपूर्ण यह है कि स्थानिक एकीकरण को समझने वाले भूगोलवेत्ता का इन नियोजनों में सहयोग नहीं लिया गया जो, इस कार्यिक एकीकरण की स्थानिक प्रकृति को विस्तार से समझ सके।

समन्वयन एवं विकास प्रादेशिक नियोजन की कुंजी है।[26] वास्तव में विभिन्न सामाजिक-आर्थिक क्रियाओं का अंतर-संबंध उनकी स्थिति पर निर्भर करता है। इन क्रियाओं के मध्य प्रसरण और संकेन्द्रण का निश्चित प्रतिरूप मिलता है। किसी प्रदेश का विकास-स्तर, अभिगम्यता, लोगों की आय का स्तर, इत्यादि वे विभिन्न कारक है, जो किसी विशिष्ट कार्य की स्थापना के आधार है। इन कारणों के मध्य अंतर संबंध न होने के कारण ही अधिकांश ग्रामीण क्षेत्र सामान्य सुविधाओं से वंचित रह गए हैं। वहीं नगरीय केन्द्रों में जीवन की आवश्य सुविधाएँ संकेन्द्रित है।[27]

विकास के क्रम में किसी नयी क्रिया की स्थानिक स्थिति सबसे महत्वपूर्ण है, जो विकास के क्रम को सतत बनाए रख कर अपेक्षित परिणाम दे सकती है। हर केन्द्र या अधिवास पर सभी प्रकार के कार्य स्थापित नहीं हो सकते। प्रत्येक कार्य के लिए उपयुक्त स्थिति का चुनाव करना ही होगा। किसी विशेष केन्द्रीय या सेवा-कार्य के लिए अधिवास के अनुकूलतम आकार की संकल्पना विश्व के किसी भी भाग के लिए उपयोगी है।[28] भारत की परिस्थितियों में यह और भी आवश्यक है। दूसरी ओर विनियोग का शीघ्र परिणाम भी प्राप्त हो सकेगा। केन्द्रीय स्थान का सिद्धान्त[29] इन्हीं बातों पर आधारित है। इस प्रकार संतुलित विकास के लिए सामाजिक और आर्थिक क्रियाओं की निर्धारित उपयुक्त स्थिति एकीकृत विकास है।

एकीकृत विकास पिछड़े क्षेत्रों के विकास से विशेष रूप से संबंद्ध है। पिछड़े क्षेत्र के समग्र विकास के लिए विकेन्द्रीकृत चयनात्मक सिद्धान्त अनुकूल है, वहीं विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया से समस्त प्रदेश का विकास संभव है। एकीकृत विकास के द्वारा किसी क्षेत्र के लिए आवश्यक अवस्थापन तैयार करके सामाजिक और आर्थिक विकास किया जा सकता है।

सूक्ष्मस्तर नियोजन एवं क्षेत्र का एकीकृत विकास

भारत के ग्रामीण क्षेत्रों के लिए पश्चिमी यूरोपीय देशों के समान एक ही प्रकार की विकास-योजना तैयार करना उपयुक्त नहीं हो सकता। अलग-अलग प्रदेशों के संदर्भ में अलग-अलग प्रकार की योजनायें ही तैयार करनी होगी, जिसमें "प्रदेश के विकास का अच्छा विवेकपूर्ण आधार प्राप्त होगा।"[30]

केवल नगरीय या ग्रामीण विकास ही नहीं, बल्कि ग्रामों के समूहों को नगरीय विकास-केन्द्रों से जोड़ने वाले "ग्रामीण-नगरीय" विकास ही ग्रामीण क्षेत्रों के भावी विकास के लिए आधार बना सकते हैं।[31] भारत को एक या अनेक साधनों वाले अनेक सूक्ष्म प्रदेशों में विभाजित करके विकास केन्द्रों को पहचानना होगा और इनके प्रभाव-क्षेत्र के आधार पर विकास के लिए योजनाएं बनानी होगी। विकास कार्यों में विनियोग के लिए ग्राम एक आदर्श इकाई नहीं हो सकता। कुछ ग्रामों में आपस में कार्यात्मक संबंध निश्चित रूप से होता है, जो एक समुदाय बनाते है।[32] किसी क्षेत्र का केन्द्रीय ग्राम अपने प्रभाव-क्षेत्र के अधिवासों को उच्च सेवा प्रदान करता है। प्रदेश में भौगोलिक क्षेत्रफल और जनसंख्या के आधार पर इन सेवा केन्द्र, विकास-विन्दु एवं प्रादेशिक नगर आपस में संबंधित होगें। इस प्रकार का क्षेत्रीय विकास ग्रामीण कार्यक्रमों और नगर के औद्योगिक रोजगारपरक कार्यक्रम के बीच समन्वय स्थापित करता है।[33]

सूक्ष्म स्तर-नियोजन का उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक क्रियाओं के केन्द्रों को प्रादेशिक स्तर पर जोड़ना है, साथ ही यह भी आशा की जाती है कि ये सामाजिक सेवा-केन्द्र प्रदेश के कृषि के अतिरिक्त अन्य प्रखण्डों के लोगों को भी रोजगार के अवसर सुलभ करायेगें।

सूक्ष्म स्तर-नियोजन किसी अधिवास विशेष के स्तर की सीमा में नहीं होता, अपितु संपूर्ण केन्द्रीय स्थान और उसका प्रभाव-क्षेत्र इसकी परिधि हो सकती है। मुख्य बात तो यह है कि सूक्ष्म स्तर-नियोजन में विकास की प्रक्रिया नीचे से ऊपर की ओर होती है। वहीं जब तक विकास का स्तर निश्चित नहीं हो जाता, तब तक "सूक्ष्म स्तर" का अर्थ अस्पष्ट रह जाता है।[34]

राष्ट्रीय और प्रादेशिक प्राथमिकता के बिना सूक्ष्म स्तर-नियोजन प्रत्येक प्रदेश की विशेषता के आधार पर प्राथमिकता का निर्धारण करता है। सच तो यह है कि सूक्ष्म स्तर-नियोजन के बिना राष्ट्रीय योजना को लागू नहीं किया जा सकता।

विकास खण्ड-स्तर पर नियोजन

ग्रामीण क्षेत्रों की प्रमुखता के कारण यहाँ पश्चिमी देशों के अनुरूप बनाई गयी विकास योजना लगभग असफल सिद्ध हुयी है। अतः नियोजकों के सामने प्रदेशों का सीमांकन प्रथम कठिन कार्य था, जिससे प्रदेश के प्रत्येक गाँव-विशेष का विकास हो सके। भारत के नगर एवं ग्रामीण नियोजन-संगठन ने मध्य प्रदेश, उड़ीसा, बिहार और पश्चिम बंगाल के कुछ भागों को सम्मिलित करके दक्षिण-पूर्वी संसाधन-प्रदेश का निर्धारण किया है।[35] सूक्ष्म स्तर-नियोजन के जिए वर्तमान सामाजिक एवं आर्थिक स्तर पर ऐसे क्षेत्रों का चुनाव कठिन है, क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र की आवश्यकता भिन्न-भिन्न है, आवश्यक आँकड़ों की कमी है और जनपद का आकार भी वृहद होता है। प्रशासनिक अवस्थापना की उपलब्धि की दृष्टि से जनपद एक महत्वपूर्ण इकाई हो सकता है, परन्तु समग्र और संतुलित विकास के लिए एक दूसरे प्रदेश की पहचान की आवश्यकता है, जिसका सीमांकन वैज्ञानिक और विवेकपूर्ण हो। अतः कमजोर वर्ग और पिछड़े क्षेत्रों के विकास के लिए जनपद स्तर पर प्रारम्भ किए गए सूक्ष्म-स्तरीय नियोजन को अब विकास खण्ड के स्तर पर लागू किया गया है।[36] इस प्रकार विकास खण्ड स्तर की कल्पना की गयी जिसके लगभग 100 ग्रामों में एक लाख जनसंख्या हो, जहाँ सूक्ष्म स्तर-नियोजन को लागू किया जा सके (भारत में एक विकास खण्ड का औसत क्षेत्रफल 620 वर्ग किलोमीटर, जनसंख्या 89,000 व्यक्ति एवं गाँवों की संख्या 120 है);[37] जिससे उस प्रदेश के कमजोर वर्ग के प्रत्येक परिवार की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार लाया जा सके।[38] इस प्रकार वर्तमान व्यवस्था के अनुसार विकास खण्ड राजस्व इकाई न होकर विकास की एक इकाई है।

जिला, तहसील या विकास खण्ड स्तर पर विभिन्न मदों के लिए धनराशि की कमी होती है। ऐसी स्थिति में धनराशि का व्यय कुछ चयनित "केन्द्रीय स्थानों" में किया जा सकता है। इसके विपरीत इन स्तरों पर यदि, धनराशि की सुविधा हो तब भी इसकी क्या गारंटी है कि प्रत्येक ग्राम में सभी सुविधाएँ चल पड़ेगी, जबकि ग्राम का संसाधन-आधार वैसे ही कम होता है। प्रत्येक ग्राम में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, महाविद्यालय या चावल मिल, आदि स्थापित नहीं की जा सकती। अतः धनराशि निर्धारण के लिए एकमात्र उपाय निवेश के लिए केन्द्रीय ग्रामों की पहचान रह जाती है। केन्द्रीय स्थानों के चयन के समय दो बातों पर ध्यान रखना होगा। प्रथम-विशिष्ट सेवा के लिए चुना जाने वाला अधिवास प्रदान की जाने वाली सेवाओं को धारण करने की क्षमता रखता है, द्वितीय- जिस ग्रामों में उक्त सुविधाएँ नहीं हैं, वे आश्रित ग्राम लाभान्वित हो। यदि स्थान का चयन आदर्श हुआ है, तब निवेश से क्षेत्र को लाभ ही होगा। यहाँ भूगोलवेत्ता पुनः अपनी अहम् भूमिका निभाता है।

सम्पूर्ण देश का विकास प्रत्येक क्षेत्र के संतुलित विकास पर निर्भर है। विगत पाँच दशकों में जनसंख्या की अप्रत्याशित वृद्धि, तीव्र औद्योगिकीकरण, नगरों की ओर जनसंख्या का प्रवास, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार की कमी, इत्यादि समस्याओं ने विकास के प्रयासों को असंतुलित करके समस्याओं को और गम्भीर किया है।[39] एक ओर महानगरों के नागरिकों को दैनिक जीवन की सभी सुविधाएँ मिल रही है, वहीं दूसरी ओर जिस ग्रामीण क्षेत्र पर भारत की अर्थ-व्यवस्था आश्रित है, वहाँ के नागरिकों को सामान्य आवश्यक सुविधाओं से भी वंचित रहना पड़ रहा है। सरकार को इस बात की चिन्ता तो है कि नगर के साथ-साथ गाँवों का समग्र विकास हो, परन्तु सरकार के पास निश्चित सिद्धान्तों का अभाव है, जिससे सम्पूर्ण क्षेत्र का एकीकृत विकास हो सके। जब तक देश के प्रत्येक भाग का विकास-नियोजन-प्रारूप तैयार नहीं होगा, तब तक सही अर्थों में सम्पूर्ण देश का एकीकृत विकास नहीं हो सकता।

References

1. जगदीश सिंह, 1982, भौगोलिक चिंतन के मूलाधार, वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर, पृ० 287.
2. Ahmed, E. and Singh, D.K.1980, Regional Planning with Particular Reference to India. Oriental Publishers, New Delhi., p.5.
3. Ghosh, Bijit, 1972, "Planning Process", in Readings on Micro Level Planning and Rural Growth Centres (ed.) L.K. Sen, NICD, Hyderabad, pp. 289-294.
4. Malgavkar, P.D. and Ghiara, B.M. "Regional Development : Where and How ?" Readings on Micro Level Planning and Rural Growth Centres, (ed.) L.K. Sen, NICD, Hyderabad, p. 303.
5. जगदीश सिंह, 1982 पूर्व उद्धारित, पृ० 290.
6. Rafiullah, S.M., 1967, "Regionalism in Geography"; "The Geographer, A.M.U., Aligarh, Vol. XIV, pp. 55-56."
7. Ahmad, E. and Singh, D.K. 1980 op. cit., p.9.
8. Perroux, F., 1955, "Surla Nation de pole de Crosissance", Economic Applique.
9. Boudeville, J.R., 1966, Problems of Regional Economic Planning, Part I, Edinburg.

10. Ahmad, E. and Singh, D.K. 1980, op. cit., p.1.
11. Ahmad, E. and Singh, D.K. 1980, op. cit., p.2.
12. Sen, L.K., R.N. Tripathi, Girish K. Mishra and A.L. Taha, 1975, Growth Centres in Raichur. NICD. Hyderabad, P.1.
13. Planning Commission, Govt. of India, 1971 Fourth Five Year Plan (Summary), Publications Division, p. 10.
14. Planning Commission, Govt. of India, 1969, Fourth Five Year Plan, 1969-74, Publications Division, pp. 229–230.
15. Klages, K.D., 1975, Das Regionals Entwick-Lungs-lefelle, Norths Erdmann Verlag, Tiebingen, pp. 30–34.
16. Mehta, Ashok, 1966, The Plan : Perspective and Problems, Bhartiya Vidya Bhawan, Mumbai, pp. 27–28.
17. Preston, A., 1972, "Pilot Research Project in Growth Centres", Readings on Micro-Level Planning and Rural Growth Centres, (ed.) L.K. Sen, NICD, Hyderabad, p. 324.
18. Ahmad, E. and Singh, D.K. 1980, op. cit., p. 53.
19. Ernest, E.M., 1964, Area Planning and Development Concepts and Guide Lines, University of Georgia, Athens (Monograph-13), p.3.
20. Sengupta, P. and G. Sadasvuk, 1968, Economic Regionalization of India, Census of India, 1961, Monograph Series, No. 8, Vol. 1, pp. 28–29.
21. Thomas, V. 1967, "Locational Choices in Planning," National Economic Planning, Universities National Bureau Conference, Series No. 19, p. 40.
22. Sadasyuk, G., 1961, Economic Regionalization of India, Census of India, Monograph, Series No. 8, Vol. 1, pp. 15–16.
23. Friedman, J., 1966, Regional Development Policy, A case Study of Venezuela, The M.T.T. Press, Massachusetts, p. 20.
24. Misra, R.P. and Sundaram, K.V. 1980 Multi Level Planning and Integrated Rural Development in India. Heritage Publishers, New Delhi, p. 70.
25. Sen, L.K., et. al., 1975, op. cit., p.2.
26. जगदीश सिंह, 1982, पूर्व उद्धरित, पृ० 294.
27. Sen, L.K. et. al., 1975, op. cit., p. 3.
28. Ensminger, Douglas and Prodipto Roy, 1972, "Growth Centres and Viable Rural-Urban Communities", in Readings on Micro Level Planning and Rural Growth Centres, (ed.) L.K. Sen NICD, Hyderabad, p. 21.
29. Christaller, W., 1933, The Central Places in South Germany, Translated by C.W. Baskin, Prentice Hall, Englewood Cliffs, New Jersey. Losch, August, 1956 The Economic of Location, Yale University Press, New Haven, Connecticut.
30. Deshmukh, C.D., 1972, "On Rural Growth Centres and Area Development", in Readings on Micro-Level Planning and Rural Growth Centres. (ed.) L.K. Sen, NICD, Hyderabad, P. 25.
31. Ensminger, Dougles and Prodipto Roy, 1972, op. cit., p. 18.
32. Fliegel, F.C., P. Roy. L.K. Sen and J.E. Kivlin, 1968, Agricultural Innovations in Indian Villages. NICD Hyderabad, pp. 68–92.
33. Deshmukh, C.D., 1972, op. cit., p. 24.
34. Sen, L.K., 1972, "The Need for Micro-Level Planning in India", Reading on Micro-Level Planning and Rural Growth Centres, NICD, Hyderabad, p.7.
35. Sen, L.K., et. al., 1975, op. cit., p. 5.
36. Rao, V.K.R.V., 1983, Foreword in Studies in Block Planning, (ed.) Abdul Aziz, Concept Publishing Co., New Delhi, p. 5.
37. Government of India, Ministry of Agriculture and Irrigation, Department of Rural Development, Statistics of Community Development Blocks, 1974-75.
38. Aziz, Abdul (ed.), 1983; Studies in Block Planning, Concept Publishing Co., New Delhi, p.5.
39. Krishna Murthi, A.V., 1972, "Regional Planning in Tamil Nadu", in Readings on Micro-Level Planning and Rural Growth Centres, (ed.), L.K. Sen, NICD Hyderabad, p. 318.